॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

यमुनालहरी।

श्रीमान् जगदीश पंडित विरचिता

हमीरपूरके श्रीयुत पंडित घनश्यामदास
डिपुटी इन्स्पेक्टर साहबकी अनुमतिसे
परम सहायता पाकर अर्गलपुर नि-
वासी राधाकृष्ण मिश्रने हरीभक्तों
के कल्याणार्थ भाषाटीका रची
जिसको

खेमराज श्रीकृष्णदासने
मुंबईमें.
निज "श्रीवेंकटेश्वर" यन्त्रालयमें
छपाकर प्रकाशितकी
संवत् १९५० शके १८१५

श्रीयमुनायै नमः ॥

यमुनालहरी ।

भाषाटीकासह ।

गौरीशङ्करवल्लभो गणपतिर्लक्ष्मीलता वारिदो विघ्नव्यूहविनाशनैकनिपुणः श्रेयस्करः सौख्यदः । इच्छापूरणकामधेनुललितः संतानवृद्धिप्रदोनित्यं मूषकवाहनो भवभृतां लम्बोदरः श्रेयसे ॥ १ ॥

॥ अथ यमुनालहरीप्रारंभः ॥

परं पुण्यं मूर्तं किमपि खलु पूर्तं सुकृतिनां महद्भाग्यं भूमेः सकलपर्वतां सारमखिलम् ॥ भवव्यालादष्टप्रचुरतरकष्टप्रशमनं जलं ते नः सौख्यं जनयतु निदाघांशुतनये ॥ १ ॥

अर्थ—उत्कृष्ट मूर्तिवान् पुण्य और पुण्यवान् पुरुषों का मनोरथ पूरक, और पृथ्वीका बडा भाग्य और

संपूर्ण पवित्रताओंका सार और संसार सर्पके काटे हुए मनुष्योंके कष्टका शांति करनेवाला ऐसा तेरा जल हे यमुने! हमको सुखकरो ॥ १ ॥

सदा गत्युद्गच्छन् जलजवकृतावर्तसरणिं वहन्तः संखेलत्तरुणशफरी कच्छपकुलैः। विशोभन्तः सन्तु श्रमदपथगन्तुस्तव मुहुस्तरङ्गा वारङ्गा मम कलुषभङ्गाय यमुने ॥ २ ॥

अर्थ—हे यमुने! सदा गमन करके उछलता जो जल उसका जो वेग उसकरिके हुवा जो भँवर उसकी पगडंडीको धारण करते और खेलते तरुण मछली और कछुवा ओंके समूहों करिके शोभित ऐसे जलरूप तेरे तरंग सो दुख दायक मार्गमें गमन कर्ता जो मैं उसके पाप दूर करनेको वारंवार होंय ॥ २ ॥

नलोके लोकेऽस्मिन् किमपि दुरितं तद्गुरुतंर मया कामक्रोधाकुलितमनसा यन्न रचितम्। तमेवं मां जानन्त्यपिच करुणापूर्णहृदये पुन-

न्ती कस्य त्वं कथय कथनीया समतया॥३॥

अर्थ—इस लोकमें कौनसा ऐसा पाप है जो उससे भारी नही देखता और काम क्रोध करिके आकुल चित्त होकर जो मैंने नहीं किया हे करुणाकरि! पूर्ण है हृदय तेरा ऐसे मुझ पापीको जानतीभी पवित्र करती है इससे तेरी किसकी बराबरी कहूं यह कह? ॥ ३ ॥

यदा लोकालोकाविगतभवशोका रविसुते पुनन्ति स्वालोकात् पुनरपि तथा ते च खलु तान् । इतीमां ते मूर्तिं यदवधिकृतान्तोऽपि बुबुधे तदारभ्यारभ्याऽखिल निज नियोगं न नयति ॥ ४ ॥

अर्थ—हे रविसुते हे यमुने! तेरे दर्शनसे जब मनुष्य संसार और शोकसे रहित हुए और पवित्र हुए तो वे अपने दर्शनसे और मनुष्योंको पवित्र करते हैं और जबसे यमराजने तेरे इस स्वरूपको जाना तबसे अपना निजका सब काम नहीं करता है ॥ ४ ॥

यदा वासादाशा शतरचितपाशावृतमिदं म-
नो मुक्तं युक्तं हरिभजनरक्तं प्रभवति । कलं
कूजत् कीरं मृदुतरसमीरं तरणिजे तदेतत्ते
तीरं मम खलु शरीरं सुखयतु ॥ ९ ॥

अर्थ—जिसमें वास करनेसे सैकडों आशारूप फाँ-
सियोंसे मन छूटै और हरिभजनमें अनुरक्तहो और
जिसमें तोते बोलते और मंदमंद वायु वहती ऐसा तेरा
सुन्दर तट हे यमुने! निश्चय करि मेरे शरीर को सुखकरो९

त्वयि स्नातुं मर्त्याश्चलितमनसो ये तु यमुने
स्मरंस्तेषां तूष्णीं भवति शमनोऽघं गुरुतरम्।
हृषीकेशः साक्षान्मृगयति गतिं सर्ववरदः
प्रशंसंस्त्वां कृष्णे सकलसुरसंपूजितजलाम् ६

अर्थ—हे यमुने! तेरे स्नान करनेको जिन मनुष्योंने मन
किया उनके बडे पापोंको जानि करिके भी यमराज
चुपहो जाताहै हे यमुने! संपूर्ण देवताओं करिके पूजित है

जल तेरा ऐसी तेरी प्रशंसा कर्ता सब वरका देने वाला विष्णु उसको साक्षात् गति देता है ॥ ६ ॥

मनोजन्मा जन्मार्जितवृजिनजालज्वरजुषा-
महोमातर्नांतः परमपरमास्मिंस्तनुभृताम् ।
सुखं मन्ये पुण्ये धरणितलधन्ये तव तटे यदावा-
सोवासोचितचितनिकुंजे विनिभवेत् ॥ ७ ॥

अर्थ—हे पवित्र हे भूमितल में धन्य हे माता! मैं ऐसा मानताहूं वासको उचितहै निकुंजलता गृह जिसमें ऐसे इस तेरे तटमें जो सुख होता है इससे परे कामदेव और जन्मों करि संचित जो पापकी ज्वालारूप ज्वर करिके युक्त मनुष्योंको सुख नहीं है ॥ ७ ॥

यदृच्छातोच्छातोच्छलदमलकच्छच्छविवहां
स्वतःप्राच्छप्राच्छच्छसलमकरीकच्छपकुला-
म् । लसल्लीलालोलत्कुहरवरकल्लोलकलितां
स्मरामि त्वां भित्वांऽबुधिगणमपित्वां
चितवतीम् ॥ ८ ॥

अर्थ—अपनी इच्छासे उज्वल उछलते निर्मल कछों-की छविको धारण करती और विशेष निर्मल चित्र विचित्र मच्छियाँ और कछुओंके समूह जिस्में और देदीप्यमान विलास करिके अनेक लहरियोंसे शोभित और पर्वतोंके समूहको भेद करि आपही संचय हुई ऐसी जो तू तिसका स्मरण करताहूं ॥ ८ ॥

मुदा स्नानं कुर्वन् ललितललनार्द्रांशुकमृदु
स्फुरत्कान्ति स्वंगोल्लसितवरलावण्यमधिक-
म् । वयस्यैःसंपश्यन् विहरदबलालोभितमना-
स्तटे यस्याः कृष्णश्चिरवसनतृष्णःप्रभवति ९

अर्थ—मोद करिके अर्थात् आनंदके साथ स्नान करती हुई जो स्त्री उनके जो गीले कपडे उनमें कोमल देदीप्यमान जो अंगोंकी कांति उससे अधिक शोभाको देखता और जलविहार करती जो स्त्री उनमें लगगया है चित्त जिसका ऐसा जो कृष्ण जिस यमुनाके तटमें बहुत देर तक ठहरता हुवा ॥ ९ ॥

सदा सद्भिः सेव्या अमितसुखदाः स्वच्छसघनाः कलंकूजत्कोकाः कलकलितकेकाकलकलः। व्यथावीथिव्याटव्यथितवपुषां वो विदधतु वितानं छायाभिस्तरणितनुजातीरतरवः॥ १०॥

अर्थ—सदा सत्पुरुषों करि सेवने योग्य और हारे थकोंको सुख देनेवाले और उजले और घने और मीठे बोलते हैं चकवा जिनमें और मीठी जो मोरों की वाणीका है सोर जिनमें ऐसे यमुनाजीके तीरके वृक्ष दुःखरूपी गलियोंमें पीडित शरीरोंको छायाका चंदोवा करो॥ १०॥

न तापान्नो पापान्नच प्रबलशापादपि तथा न-मृत्योर्नो शत्रोऽकिमुतचयवेत्रोदकवति। वि-शंके ते पंके विगलितकलंके विनिलुठन् य-दिस्यां हे कृष्णे हत विषय तृष्णे हितपरः॥ ११॥

अर्थ—हे यमुने हे तृष्णा दूर करने वाली! दूर हुवाहै

कलंक जिसका और वेतोंके समूह जिसमें विद्यमान ऐसी तेरी कीचमें जो मैं अपना हित चाहता हुवा लोटूं तौ मुझको ताप और पाप और प्रबल शाप तथा जमराज और शत्रुसेभी किसी प्रकार शंका अर्थात् डर नहीं ॥ ११ ॥

न दानैर्न ध्यानैर्नच निगमगानैरपिचया न यज्ञै-
र्नौयोगैर्हरिचरणभक्तिर्विनिभवेत् । निजालो-
कादेव त्वमपि मयि तां पापकृतिच वितन्वा-
ना नानासुकृतिवरमानान् दलयसि ॥ १२ ॥

अर्थ—जो विष्णुभक्ति न दान करनेसे ध्यान करनेसे न शास्त्रके गान करनेसे न योग करिके न यज्ञ करिके होती सो भक्ति मुझ पापीमें विस्तार करती भई जोतू सो अनेक प्रकारके पुण्यवानों के वरके मानों को दलती है ॥१२॥

गतं तेषां व्यर्थं जगति जननं यैः क्वचिदपिन
भानव्यान व्यादलितवृजिनव्याधिनिचया ।

जनैर्दृष्टा मूर्त्तिः सकलसुखपूर्त्तिः सुमनसां यदा
लोके वाञ्छा भवति सुरलोकेऽपि वसताम् १३

अर्थ—पापोंके समूहोंको दूर करने वाली, और पूर्ण सुख करने वाली ऐसी जमनाजीकी अपूर्वमूर्त्ति जिह्नोंने कभी नही देखी उनका जन्म जगतमें वृथा गया क्योंकि स्वर्गमें वास करत देवताभी जिसके दर्शनकी वाञ्छा करते हैं ॥ १३ ॥

समृद्धिः सिद्धीनां सकलसुखवृद्धिस्तनुभृतां म-
हर्द्धिर्मान्यानां किमु किल तपर्द्धिः सुतपसाम् ।
वहित्री दुःखाब्धेः पुनरपि सवित्री बत मुदां
धरित्री धर्माणां तव पुलिनधूलिर्विजयताम् १४

अर्थ—सिद्धियोंकी ऋद्धि और प्राण धारियों के संपूर्ण सुखकी वृद्धि करनेवाली और मानने योग्यों की बडी ऋद्धि और तपस्वियोंकी तपकी ऋद्धि और दुःख रूपी समुद्रसे पार करने वाली और अत्यंत हर्ष को

उत्पन्न करने वाली और धर्मों की धरती ऐसी तेरी रेती जयवंती होउ ॥ १४ ॥

तपश्चर्यानिष्ठाजगतिखलुशिष्टाः कतिपयेरताः केचिद्दाने वितरितविताने तरणिजे । पठन्त्येके वेदान्नहमपितु ते दासपदवीं पराधीनो दीनो विमलमतिहीनोऽस्म्युपगतः ॥ १५ ॥

अर्थ—हे यमुने! कितनेही साधु मनुष्य तप करते हैं और कितने ही दान करते हैं और कितने ही यज्ञ करतेहैं और कितनेही वेद पठतेहैं और मैं पराधीन और दीन और बुद्धि हीन तेरी दासपदवीको प्राप्त हुवाहूं॥१५॥

बकाल्यापाथोदे हरिविपुलवक्षः परिसरत् सुमुक्ता हारस्य स्फटिक शकलालपाश्व सुषमाम् । मुषन्तो हे मातर्मरकतशिलायामविरतं हरन्तान्ते फेना मम सततमेनांसि यमुने ॥ १६ ॥

अर्थ—मेघमें बगुलाकी पंक्तिकी शोभाको, और विष्णुके वक्षःस्थलके हारकी शोभाको, और मरकत

मणिमें स्फटिकके खंडोंकी शोभाको चुराते, ऐसे तेरे झाग निरंतर, हे माता यमुना मेरे पापोंको हरो ॥ १६ ॥

इदंनीरं पीयूषमसममपीयू रविसुते निजापान्
संहर्तुं विरहिजनतापात्सततगान् । सदा कव्या
जेन श्रयति सति चेदल्पमपि यत् विषंदर्शो-
प्यासीत्रिजगति सुधा शेवधिरसौ ॥ १७ ॥

अर्थ—हे यमुने! यह विरहीजनोंके अनुपम अमृत जलकी इच्छा करनेवाला चंद्रमा दुःखसे निरंतर सगी जो निज पाप तिनके दूर करनेको सदा श्याम चिह्नके मिष करिके थोडेभी विषको स्पर्श करता संता तीनों जगतमें अमावस रूप होता भया ॥ १७ ॥

स्वतः स्वच्छं शीतं श्रमितसुखदं सिद्धिसदनं
समाराध्यं सद्भिः सकलसुरसंघैश्च सततम् ।
शरीरासंसर्गात् शमलशतशातं शुचि तव सदा
स्माकं सौख्यं भवतु सलिलं सूरसुतिके॥१८॥

अर्थ—हे सूर्य पुत्री जमना आपसेही निर्मल और

ठंडा और हारेथके पुरुषोंको सुखका देनेवाला और सिद्धिका घर सत् पुरुष और देव समूहों करिके निरंतर आराधन योग्य और सैकडों मल रहित इसीसे शोभित और पवित्र ऐसा तेरा तोय अर्थात् जल हमको सदा सुख करो ॥ १८ ॥

अपारं गंगाया हरधृतजलाया सकृदपि यशो
विष्णोःपादस्खलितसलिलाया वितरितम् ।
वधूटीवक्षोजस्थलनिभृतमानं मधुरिपोः पुनः
किं प्राप्तायाश्चरणकमलं ते नुदिवसम् ॥ १९॥

अर्थ—महादेवजीने धारण किया है जल जिसका और एक समय विष्णुके चरणोंसे गिराहै जल जिसका ऐसी गंगाको जस अपार दिया है और स्त्रियोंके कुच-स्थलमें भरनेसे हुवाहै मान जिसको ऐसा होते हुए फिर प्रतिदिन विष्णुके चरण कमलको प्राप्त जो तू अब क्या कहना है ॥ १९ ॥

वृथागीर्वाणैस्ते सलिलमपिबद्भिः प्रकथिता

सुधेति स्वादीया दलित दुरितागे रविसुते ।
हसंत्यंबे येतु त्वदुदकनिपानामलधियो भवार
ण्यारण्या जलचकितचित्तोचितजले ॥ २० ॥

अर्थ—नाश किये हैं पाप रूप पर्वत तैंने ऐसी हे यमुने! तेरे जलको नहीं पीते हुए देवता ओंने बडे स्वाद-के अमृतकोभी वृथा कहा है हे अंबे संसार रूपी जो बन तिसके जलानेको दावानलकी तुल्य ऐसा तेरे जलके पीनेसे निर्मल हुई है बुद्धि जिनकी ऐसे जन देवता ओंको हँसते हैं ॥ २० ॥

यदालोकात्सर्वे यदिह परिधावंति दुरिता नय-
स्याःसादृश्यं कलयतितरां तीर्थनिवहः ।
इमान्ते मूर्त्तिताम्रथभुविजनाः प्राप्य त्रिदशै
र्भजन्ति क्लेशं ये दिनमणिसुते धीःपरिहृता २१

अर्थ—जिस तेरी मूर्तिके दर्शन से इस लोकमें सब पाप भगिजातेहैं तौ इस कारण से सब तीर्थोंका समूह तेरी बराबरी नहीं कर सकता हे सूर्य सुते! पृथ्वी विषें इस

तेरी मूर्तिको पायकरिके मनुष्य जो स्वर्गके सुखोंको चाहतेहैं उनकी बुद्धि मारी गईहै ॥ २१ ॥

प्रधानं पुण्यानां पृथुलपरिधानं यवयतां
निधानं नीतीनां नव नवनिधानं नगरकम् ।
विधानं विद्यानां विविधविबुधानंदनवनं समा-
धानं सिद्धेर्हरतु दुरितं यामुनवपुः ॥ २२ ॥

अर्थ—पुण्यों में प्रधान, पापके ढकनेका वस्त्रतुल्य नीतिका निधान, नगरोंका नयानया निधान, विद्याओं-का विधान, अनेक देवताओंको नंदनवनके तुल्य, और सिद्धिका समाधान, ऐसा जलस्वरूप यमुनाका शरीर पापोंको हरो ॥ २२ ॥

कलिन्दिगिरिनन्दिनि प्रणतप्राणसंरक्षणे धनं-
जयसखप्रिये सकलसिद्धिदे मानवि । चिराय
वसतिस्तटे तव यथाऽकृथा मे भवेत् तथाच
न यथा व्यथा हरिकथा यथाशृण्वतः ॥ २३ ॥

अर्थ—हे कलिन्दकन्या पर्वतकी पुत्री हे नमस्कार

करनेवालोंके प्राणोंकी रक्षा करने वाली है और विष्णुकी प्यारी है और संपूर्ण सिद्धिके देनेवाली है हे सूर्य पुत्री! जो तेरे तट विषें बहुत वास किया होता तौ पीडा नही होती क्योंकि जैसे हरिकथा सुनने वालोंको पीडा नही होती ॥ २३ ॥

यमुना सलिलस्पर्शकरा यमिनां चापि मनो वशीकराः। निपतंतु सदा कलेवरे मम नित्यं विशदाः कलेवरे ॥ २४ ॥

अर्थ—जमनाजीके जलके कण संयमी मुनियों के मन वश करनेवाले हैं वेही निर्मल जलकण मेरे शरीरमें नित्य गिरो ॥ २४ ॥

सिकतोज्ज्वलवत्प्रभानवी कृतरूपाच तव प्रभानवी। छलितच्छविवप्रभा नवी दयितां वेल्लितवप्रभानवी ॥ २५ ॥

अर्थ—तेरी नवीन प्रभा उज्जल रेतीके प्राकारसे सूर्य कीसी प्रभा हो कर कृत कृत्य हो जाती है उच्छलित

जलकी छवि सूर्य प्राकार से प्यारी दीखती है ॥ २५ ॥

सकलसुरमुनीन्द्रैःपूजितायास्तवांभः सकृ-दपि परया ये श्रद्धया संस्पृशन्ति । जगति जननि को वा स्यात्क्षमः पुण्यसंख्यां गदि-तुमहह तेषामप्यसंख्यातजिह्वः ॥ २६ ॥

अर्थ—संपूर्ण देवताओं और ऋषियों करिके पूजित जो तू ऐसे तेरे जलको एक समयभी जो स्पर्श करलेतेहैं तौ हे माता! असंख्यात जीभवालाभी इस जगतमें उनके पुण्यों की गिनती करने को कौन समथ है अर्थात् कोई नहीं है ॥ २६ ॥

घुष्टाघेतर संघसंघटित घाटघटाघट्टयन्ती । घ टयत्वघौघविघटनमतुलघृणाधर्मघृणिपुत्री २७

अर्थ—हे अतुल कृपावती सूर्य पुत्रा पापोंके समूहों-को नाशकरो क्योंकि पुण्यसमूह करिके बनाये घाटों की घटा करने वाली ऐसी तूही है ॥ २७ ॥

कालिन्दी कमनीया कुसमितकुजकुलकूल कानन श्रीः । कल्मषकारणकलिनी कलयतु नऽ कापि कामदा कुशलम् ॥ २८ ॥

अर्थ—सुन्दर और फूले वृक्षसमूहों करिके तटके बनकी शोभा करने वाली और पापके कारण दूर करने वाली और मनोरथोंके पूर्ण करने वाली ऐसी जमनाजी हमारी कुशल करो ॥ २८ ॥

यमुने यमुने तु माघता यमदूता यमुनेतिभाषिणम् । अवगम्य विहाय सत्वरं भयभीताश्चपलाऽ पलायिताः ॥ २९ ॥

अर्थ—हे यमुने यमके दूत जिसके लेनेको आये और उसको जमना जमना ऐसें कहते हुए देखकर और उसको छोडकर शीघ्रही चपलतासे भाग गये ॥ २९ ॥

मातःश्रीयमुने तवास्मि पृथुकः पाल्य स्त्वया-सर्वदा स्वोत्संगेविनिधाय मां च मधुरं संपायय स्वं पयः । नानापातकधूलिधूसरतनुं

प्रक्षालय त्वं द्रुतं प्रोत्तुंगस्वतरंगपाणिभिरहं-
यामि क्व हा त्वां विना ॥ ३० ॥

अर्थ—हे यमुना माता! मैं तेरा पुत्रहूं तू सदा पालन कर और अपनी गोदमें मुझको धरकर मीठा जल पिला और अनेक धूलिरूप पातकोंसे मेंटने मेरे शरीरको शीघ्रही ऊंची तरंग रूप हाथोंसे धोय तुम्हारे विना कहां जाऊं ॥ ३० ॥

सर्वरोगप्रशमनाजमनाविपदां द्रुतम् । दमुनाः
पापकक्षानां यमुना दिशतां शुभम् ॥ ३१ ॥

अर्थ—सब रोगोंकी शांति करने वाली और विपत्तिकी भक्षण करने वाली और पापरूप घासकी राशिको अग्नि तुल्य जलाने वाली ऐसी तू कल्याण करो ३१

इमां श्रीकालिन्द्यालळितलहरीं सौख्यनिवहां
समारब्धां प्रीत्यासुकविजगदीशेन विदुषा । प-
ठेद्भक्त्यायो वापि च खलुजनो यस्तु शृणुयात्
तयोःशापं पापं त्रिविधमथ तापं न भवति॥३२॥

अर्थ—अच्छे कवि जगदीश पंडित की प्रीतिसे बनाई हुई सुखदायक श्रीजमनालहरीको जो मनुष्य भक्तिसे पढै और सुने उसको तीन प्रकारका दुःख नही होय ॥ ३२ ॥

इति श्रीमत्कुंजविहारिपादारविन्दमिलिन्देन श्रीजगदीशाभिधानगोस्वामिना प्रणीता यमुनालहरी पर्यवसिता

॥ इति भाषाटीकासहिता यमुनालहरी संपूर्णा ॥

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदास इनोनें अपने "श्रीवेंकटेश्वर" छापखानेमें छापके प्रसिद्ध किया संवत् १९५० शके १८१५.